Pradeep Raj P. “ Search for the cultural identity of India in contemporary Hindi poetry (With special reference to 1980-2000)” Thesis. Department of Hindi, University of Calicut, 2017

दूसरा अध्याय

भारत का सांस्कृतिक परिवेश : सन् 1980 के बाद

मनुष्य की संस्कृति उसके श्रम का परिणाम है। यह संस्कृति उसके चारों ओर के दृश्य व अदृश्य जगत को समग्रता में ग्रहण करने की उसकी आकांक्षा की अभिव्यक्ति है। इस तरह संसार को जानने, पहचानने और परखने की दृष्टि से किए गए संघर्ष के परिणामस्वरूप संस्कृति का वृक्ष फूलता–फलता है। वह अपनी जड़ों को मिट्टी की गहराईयों में तथा शाखाओं को आकाश के विस्तार में फैलाता है। ''उसका भौतिक संसार कैसा बना है, इसका विस्तार क्या है और इसके साथ वह कैसे जुड़ा हैं इसी से दर्शन और विज्ञान का जन्म होता है। उसका सौन्दर्य बोध इसे किस रूप में देखता है और ग्रहण करता है। इसी से कलाओं और साहित्य का जन्म होता है। इस संसार से और फिर अपनी प्रजाति के अन्य व्यक्तियों से उसका क्या नैतिक संबंध हैं इससे नैतिक आदर्शों और धर्म का जन्म होता है। इन तीनों आयामों, उसकी सर्जनात्मक शक्ति एक सर्वांगीण संसार का निर्माण करती है, जो समय के साथ विस्तार पाता जाता है।''[1] ये सभी मानव के सांस्कृतिक विकास के विभिन्न पहलू हैं।

भारत की सांस्कृतिक विकास का कलेवर बहुत विस्तृत है। यहॉ प्राचीनकाल से ही विभिन्न संस्कृतियों के आने और यहॉ की मूल संस्कृति में घुलमिल जाने की प्रवृत्ति विद्यमान रही है। अतः भारत का सांस्कृतिक परिवेश खण्डित रहा है। फिर भी भारतीय संस्कृति का मूल स्वभाव–स्वीकार करते हुए विस्तार पाना बना रहा। भारत की सांस्कृतिक अस्मिता को निर्धारित करने में जवाहरलाल नेहरू, महात्मा गॉधी, बी. आर. अंबेडकर, सरदार पटेल, गोपालकृष्ण गोखले, बालगंगाधर तिलक, जैसे

महान व्यक्तियों ने प्रयास किया है। इन्होंने भारत की सांस्कृतिक भिन्नता को ध्यान में रखते हुए स्वतंत्र भारत को एक ऐसा संविधान दिया जिसकी आधारशिला भिन्नता में एकता को कायम रखना तथा उस पर आधारित राष्ट्र का निर्माण करना है। विश्व के अन्य राष्ट्र को उदाहरण स्वरूप पेश करते हुए भारत की अस्मिता को पहचानना कठिन है। भारत की सांस्कृतिक अस्मिता की पहचान को चिन्हित करने के लिए विभिन्नता की पहचान, तत्पश्चात् भागीदारी और उससे उत्पन्न समभाव या समानता का सही ज्ञान आवश्यक है।

सन् 1980 के बाद के भारत का सांस्कृतिक परिवेश का अंकन उसके सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिस्थिति के अध्ययन से होगा।

2.1.सामाजिक परिस्थिति और अस्मिता

भारतीय समाज इतना वैविध्यपूर्ण है कि उसे किसी वर्ग विशेष, जाति विशेष आदि विभाजनों से भी कभी कभार अभिहित और पहचाना नहीं जा सकता। इसका मुख्य कारण यहॉ की सामाजिक गठन हैं।यहॉ समान जातियों में भी कहीं–कहीं क्षेत्र की भिन्नता के कारण भाषायी अभिव्यक्ति में भिन्नता देखी जा सकती है। यहॉ जातीय समूह, उनकी भाषायी अभिव्यक्ति, उनके परंपरागत आचार–विचारों को जाने बिना तथा उनकी आपसी संबद्धता को सही अर्थों में पहचाने बिना देश के बड़े कलेवर में उनका स्थान चिन्हित करना कठिन है। यही कठिनाई स्वतंत्र भारत के सरकार के सामने थी। परन्तु नेता वर्ग अपने स्वार्थ लाभ को साधने के लिए इन क्षेत्रों के संबंध में नवीन दृष्टिकोण को अपनाने के

बजाए औपनिवेशिक शासन व्यवस्था को हू–ब–हू अनुसरण किया। वह औपनिवेशिक शासन व्यवस्था जिसने अपने प्रशासनिक कार्य को सुगमता से आगे बढ़ाने हेतु कई जातीय व जनजातीय समूहों की पारंपरिक सामूहिक व्यवस्था को जड़ से उखाड़ दिया।

ट्राइबल शब्द की उत्पत्ति औपनिवेशिक काल में हुआ है। इन्हें सामान्य से अलग केवल इनके आवासीय क्षेत्र के कारण देखा गया बल्कि यह भारतीय प्रान्त के वह लोग हैं जो बाहर से आकर यहॉ के समाज में घुलमिल गए जातियों की तुलना में पहले से यहॉ मौजूद है। इन बारीकियों को देखे बिना केवल औपनिवेशिक व्यवस्था तथा उनके कानून व नियमावलियों का यहॉ के सरकार द्वारा अनुसरण ही एक बड़ी नाकामयाबी थी। कई सरकारी नियम जो इस भारतीय समूह को बॉधे हुए हैं, वह महज़ औपनिवेशिक शासन प्रणाली के अवशिष्ट हैं। ''उत्पादन व्यवस्था का सुविचारित असमानता, जनजातियों को जानबूझकर जबरन पृथक रखने और विडम्बना से, आधुनिक यातायात के विकास प्रक्रिया जो पारंपरिक व्यवसाय मार्गों और प्रणालियों को परिवर्तित और यहॉ तक की उसे नष्ट कर दिया, औपनिवेशिक नीति का हिस्सा था जिसने जातियों के बीच मिश्रण और एकीकरण की प्रक्रिया को त्वरित करने के बजाए अलगाव की स्थिति को प्रोत्साहित किया और कुछ मामलों में अलगाव की स्थिति को उत्पन्न भी किया।''[2]एक ही जनजातीय समूह भारत के कई हिस्सों में पाए जाते हैं जो इनके आवागमन को दिखाता है। कई जगह साधारण किसानों और इनके बीच विशेष भिन्नता पाई नहीं जाती। यह सारे तथ्य यह दिखाता है कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था के परिवर्तन की

प्रक्रिया में यह समूह दूसरों की भॉति ही एक सामान्य अंग है जिसे सरकार ने अनदेखा कर दिया।

भारत की संस्कृति ने यहॉ की जनता को समान अवसर दिया है। एकता में अनेकता एक ऐसा तथ्य है जिसका सीधा संबंध हर तबकेकी जनता की समान भागीदारी है। परन्तु जिस तेजी से देश में सांप्रदायिकता बढ़ी है, क्षेत्रवाद बढ़ा है, इसका मुख्य कारण यहॉ की राजनीतिक विफलता है। इस विफलता का परिणाम 1975 के आपातकाल से आरम्भ होता है। भारत की संस्कृति को मद्देनजर रखते हुए, यहॉ के संविधान का गठन किया गया था, क्योंकि इसमें धर्मनिरपेक्षवाद, समाजवाद और लोकतंत्र के प्रमुख आदर्शों को उद्घोषित किया गया है। भारत की संस्कृति विभिन्न सामाजिक–आर्थिक समूहों के बीच की अन्तर्निर्भरता का उदाहरण पेश करती है। ऐसा नहीं है कि भारत की जनता उसके एक देश या राष्ट्र के रूप में उभरने तक की प्रक्रिया में संघर्ष का सामना न किया हो। कई समय तक भारत विदेशी आक्रमण को सहा है। इस दौरान कई विदेशी जातियों का आगमन हुआ। तत्पश्चात् अंग्रेजों के हुकूमत के तले दबा पड़ा। परन्तु भारत की सामाजिक व्यवस्था ने आपसी आदान–प्रदान के ज़रिए अपनी अस्मिता को बनाए रखा। स्वातंत्रोत्तर भारत की स्थिति भिन्न है। यहॉ सामान्य जनता के लिए सामाजिक व्यवस्था एवं न्याय व्यवस्था बद्तर होती जा रही है। ''स्वातंत्रोत्तर भारत में वितरित न्याय के अभाव के कारण नए प्रकार की सामाजिक और आर्थिक विसंगतियॉ उभरी हैं। विकास के कार्यक्रमों द्वारा दलितों और वास्तव में सामाजिक और आर्थिक प्रगति की आवश्यकतापरक लोगों के बजाए परंपरागत समृद्ध लोगों को अधिक लाभ

हुआ है।''[3] इस अव्यवस्था के कारण भारत के इतिहास में बहुत सी अप्रिय घटनाएँ हुईं जिसने भारत की सामाजिक व्यवस्था पर गहरा प्रभाव डाला, यथा 1970 के दशकों में कांग्रेस सरकार के विरुद्ध जन आक्रोश, 1975 में आपातकाल की घोषणा, खालिस्तान की मांग, ब्लू स्टार ऑपरेशन, प्रधानमंत्री इंदिरा गॉधी की हत्या, सिक्ख हत्याकाण्ड, सोवियत यूनियन का विघटन, आर्थिक तंगी, उदारीकरण, बाबरी मस्जिद का खण्डन, इस्लाम व हिन्दुत्व उग्रवादियों का पुनरुत्थान, सांप्रदायिक दंगे, काला धन। यह पूरी घटना भारत के सेक्यूलर समाज के लिए एक बहुत बड़ा झटका था।

70 के दशक में सरकार के विरुद्ध आम आदमी का आक्रोश उमड़ पड़ा। जगह–जगह आम लोगों व छात्रों का प्रदर्शन होता रहा। जयप्रकाश नारायण ने पूरे भारत में संपूर्ण क्रांति का नारा छेड़ा। इनके फलस्वरूप 1975 में आपातकाल की घोषणा हुई। प्रधानमंत्री इंदिरा गॉधी ने सरकार के विरुद्ध उठने वाले हर आक्रोश का दमन किया और उन्हें कारावास में डाल दिया। 1977 में आपातकाल का अन्त हुआ। तत्पश्चात् आम चुनाव मेंभारत के राजनीतिक इतिहास में पहली बार गैर कांग्रेस–जनता पार्टी को जीत हासिल हुई। इन ऐतिहासिक घटनाओं ने आगे चलकर भारत के सामाजिक और राजनीतिक परिदृश्य को बदल डाला। परन्तु आपातकाल के पूर्व जो भ्रष्टाचार, भुखमरी, आर्थिक तंगी, किसानों के आत्महत्या, निम्न जाति व वर्ग का शोषण, सांप्रदायिकता, बेरोज़गारी आदि थी, वह आपातकाल के बाद भी पूरे भारतीय समाज में महामारी की तरह फैलती गई।

1980 के बाद के वर्ष ऐसे थे जिनमें भारत अपनी समाजवादी रुख से कुछ परे हो रही थी। सार्वजनिक क्षेत्र में निजी विदेशी कंपनियों पदार्पण कर रही थी। भारत के सरकारी, गैर सरकारी तथा निजी क्षेत्र में विदेशी कंपनियों का हिस्सा (शेयर) बढ़ाने के देश की सरकार के फैसले से मंडी में ऐसे बदलाव आए जिसने भारतीय समाज को गहराई से प्रभावित किया। इसका एक रूप यह है कि मारुति, बजाज जैसे कंपनियॉ देश के आम लोगों के बीच सामान्य हो गईं। इस समय मीडिया, विशेषकर दूरदर्शन, ऑल इंडिया रेडियो अपने कार्यक्रमों के ज़रिए साधारण जनता (खासकर मध्य एवं उच्च वर्ग) में अपना पैठ जमा रही थीं। दूरदर्शन के ज़रिए धारावाहिक कार्यक्रम जैसे बी आर चोपड़ा द्वारा निर्मित 'महाभारत', रामानन्द सागर निर्मित 'रामायण', 'श्री कृष्ण' आदि लोकप्रिय संस्कृति (पॉपुलर कल्चर) का हिस्सा बन गई।

80 के दशक में पंजाब में संप्रदायवादियों ने सिक्खों के लिए एक अलग देश की मांग छेड़ी, जो खालिस्तान आन्दोलन के नाम से जाना जाता है। इनके प्रवक्ता जगजीत सिंह चौहान और बलबीर सिंह संधु थे, जिन्होंने आगे चलकर लड़ाकू गुटों से मिलकर सरकार के खिलाफ युद्ध छेड़ दी। इसके परिणामस्वरूप इस विद्रोह को उस समय के प्रधानमंत्री श्रीमति इंदिरा गांधी ने ब्लू स्टार सैनिक ऑपरेशन के ज़रिए कुचल दिया। आगे चलकर प्रधानमंत्री श्रीमति इंदिरा गॉधी को उनकी अपनी सिक्ख अंगरक्षकों ने ही हत्या कर दी जिसके फलस्वरूप पूरे उत्तर भारत में खासकर दिल्ली में हज़ारों सिक्खों की हत्या कर डाली गई तथा उन्हें लूट लिया गया। इस घटना ने भारत की धर्मनिरपेक्षता की छवि पर गहरी चोट की। ''उस समय सिक्ख समूह पर जो आक्रमण हुआ और

तत्पश्चात् केन्द्र सरकार द्वारा सिक्ख आन्दोलन के दमन के लिए जो राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम (1980), पंजाब विक्षुब्ध क्षेत्र अध्यादेश (1983), सशस्त्र बल विशेष अधिकार अधिनियम (1983), आतंकवाद प्रभावित क्षेत्र (1984 का विशेष न्यायालय अधिनियम) को पारित किया गया, जिसने भारत के एक प्रत्येक समूह के जीवन व्यवस्था को ही उलट दिया।''[4]

भारत के सेक्यूलर मनस्थिति को दूसरा झटका तब मिला जब अयोध्या में 6 दिसम्बर 1992 को राम जन्म भूमि विवाद के तहत् बाबरी मस्जिद को तबाह कर दिया गया। इस घटना के उपरान्त पूरे भारत में अनगिनत जगहों पर हिन्दू–मुसलमान दंगे हुए जिसमें दोनों पक्षों के हज़ारों लोग मारे गए। इसके बाद आर एस एस, वी एचपी जैसे हिन्दुत्व गुटों ने हिन्दुत्व का प्रचार–प्रसार किया तो दूसरी ओर एक प्रकार की विशेष मुस्लिम अस्मिता का भी निर्माण किया जिसके फलस्वरूप पूरे भारत के मुसलमानों के सामाजिक, शैक्षणिक, आर्थिक, राजनीतिक पक्षों को प्रबल बनाने हेतु कई संस्थाएं बनी। ''बाबरी मस्जिद की घटना और उसके कुछ साल बाद केन्द्र में बीजेपी सरकार आने से देश के अन्दर मुसलमानों में असुरक्षा का भाव उत्पन्न हुआ जिसके बाद मुस्लिम समाज में सामाजिक–राजनीतिक क्षेत्र में उनकी पहचान का होना आवश्यक समझा गया।''[5] 2002 में गुजरात में हुए गोधरा दंगे में हज़ारों मुसलमानों की हत्या की गई जिनमें महिला और बच्चे भी शामिल हैं। इन सभी घटनाओं ने भारत की धर्मनिरपेक्षता, सर्वधर्म समभाव, सांस्कृतिक आदान–प्रदान, भारतीयता आदि मूल्यों पर जो प्रहार किया, पूरे भारतीय समाज में उसका प्रभाव बहुत गहरा है।

1991 में सोवियत यूनियन के विखण्डन से भारत में ही नहीं पूरे विश्व में समाजवादी–साम्यवादी मूल्यों पर बड़ा गहरा असर पड़ा। 1992 की आर्थिक तंगीतथाउससे भारत की अर्थव्यवस्था को बचाने हेतु भारत सरकार ने उदारीकरण का रास्ता अपनाया जिससे भारतीय मंडी में अधिक से अधिक विदेशी कंपनियॉ तथा पूॅजी निवेश आईं। इसका परिणाम यह हुआ कि भारतीय समाज ज़्यादा उपभोगवादी समाज बन गया। समाज के विकास मेंआर्थिकपहलू को अधिक महत्व दिया जाने लगा। उच्च व निम्न वर्ग की खाई बढ़ती गई। भारत सरकार आई एम एफ व विश्व बैंक की नीतियों का अनुसरण करने लगा। इसका मुख्य कारण आर्थिक निर्भरता थी।

इस तरह देखें तो 1980 के बाद भारत के सामाजिक फलक में कई ऐसी घटनाएॅ हुईं जिसने भारत की सांस्कृतिक अस्मिता को चिन्हित करने और भारतीय समूह के सामने उसे प्रस्तुत किए जाने की चुनौती और बढ़ गई है। भारतीयता की सही पहचान इस उत्तर आधुनिक समय में अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर एक देश के रूप में भारत के तथा यहॉ की जनता का विकास आवश्यंभावी है।

2.2. **आर्थिक परिस्थिति और अस्मिता**

1980 के बाद भारत की विश्व बैंक, आई एम एफ, तथा निजी संस्थाओं से ले रहे कर्ज़ बढ़ता चला गया। भारत आर्थिक तंगी में फसता गया। आर्थिक विकास की सही देखरेख के अभाव में भारत की आर्थिक स्थिति बदतर होती गई। 1992 की आर्थिक तंगी के फलस्वरूप तत्काल वित्त मंत्री मनमोहन सिंह द्वारा भारत के आर्थिक ढॉचे में उदारीकरण की

नीति को अपनाए जाने के बाद तत्काल प्रगति के मार्ग तो खुल गए परन्तु लम्बी अवधि में वह भारत के सांस्कृतिक क्षरण का कारण बना। ''उदारीकरण के फलस्वरूप विदेशी पूँजी निवेश बढ़ने से सामग्रियों और पूँजीगत माल के कुल विदेशी विनिमय आगमन दर बढ़ गया जिससे निर्यात के क्षेत्र में निर्भरता बढ़ गई।''[6] आर्थिक स्थिरता को बनाए रखने हेतु सीमा शुल्क अधिक बढ़ाने के लिए आयात व्यवस्था को उदारीकृत कर दिया गया जिससे समस्या पर तत्काल नियंत्रण तो हासिल हुआ परन्तु आगे चलकर इसने निर्यात मूल्य को घटा दिया।

आर्थिक बदलाव में सामूहिक मनोविज्ञान एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। परन्तु भारत एक ऐसा देश है जहॉ वर्ग विभाजन से बढ़कर धर्म, जाति, क्षेत्र व भाषा आधारित विभाजन भी मौजूद है। भारत के हर समूह में अर्थ संबंधी मान्यता भिन्न है। सामग्री का मूल्य हर जगह एक समान नहीं है। 1980 के बाद भारत की आर्थिक स्थिति में जो गिरावट आई है, वह सरकार की आर्थिक नीति पर प्रश्न चिह्न लगाता है। सरकार जिस सामूहिक बदलाव को लाना चाहती थी, उसमें वह विफल साबित हुई। देश की सामाजिक व आर्थिक नीति ने देश भर की जनता में आक्रोश उत्पन्न किया। गॉव की अर्थव्यवस्था बद्तर होती गई। नौकरी की तलाश में गॉव से लोग लाखों की मात्रा में शहर की तरफ आने लगे। 1955 में भारत और चीन की अर्थव्यवस्था समान स्तर परथीं परन्तु बाद के दशकों में चीन की अर्थव्यवस्था भारत के कई गुणा आगे निकल गई। देश ने विकास नीति के लिए पश्चिमी देशों के नीति का अनुसरण किया। परन्तु भारत की सामूहित व सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पश्चिमी

देशों से भिन्न था। बेरोज़गारी और महॅगाई ने जनता में अव्यवस्था और आक्रोश उत्पन्न किया।

1975 में भारत ने अपनी आज़ादी के बाद सबसे बड़े राजनीतिक संकट का अनुभव उस समय किया जब 26 जून को आंतरिक आपातकाल की घोषणा कर दी गई। 1973 की शुरुआत से ही प्रधानमंत्री श्रीमति इंदिरा गॉधी की लोकप्रियता घटने लगी। जनता की आकांक्षाएँ अधूरी थीं। ग्रामीण या शहरी गरीबी एवं आर्थिक विषमताओं के मोर्चे पर शायद ही कुछ किया गया था और ग्रामीण क्षेत्रों में जातीय शोषणों में कोई कमी नहीं आयी थी। ''असंतोष उभरने का तात्कालिक कारण आर्थिक परिस्थितियों में स्पष्ट गिरावट था। मन्दी, बढ़ती बेरोजगारी, आकाश छूती महॅगाई और खाद्य पदार्थों की कमी आदि सब कुछ ने मिल जुलकर एक गंभीर संकट उपस्थिति कर दिया था। 1971 के दौरान बांग्लादेश से आए एक करोड़ से अधिक शरणार्थियों तथा साथ ही बांग्लादेश युद्ध ने बड़ी आर्थिक विषमता खड़ी कर दी। 1972 व 1973 में लगातार मानसून भी असफल रहा जिससे देश के अधिकतर हिस्सें में भयंकर सूखा पड़ा और खाद्यान्नों की भीषण कमी हुई और इसके फलस्वरूप उनकी कीमतों में भारी वृद्धि हुई।''[7] कानून और व्यवस्था की हालत निरन्तर खराब होती गई। हड़तालें, छात्र प्रदर्शन और जुलूस अक्सर हिंसक हो उठे। कुल मिलाकर कांग्रेस के खिलाफ़ देश में ज़बरदस्त लहर उठी। 1975 के आपातकाल की घोषणा से इसकी परम परिणति तक पहुॅची। जयप्रकाश नारायण ने उस समय पूरे भारत में 'संपूर्ण क्रांति' का नारा छेड़ा। यह वह पूरी व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष था जिसने हर व्यक्ति को भ्रष्ट बनने के लिए मजबूर कर दिया था।

आपातकाल के बाद भी भारत की इस आर्थिक अस्थिरता का कारण सरकार की सामाजिक नीति में फैली रूढ़ियों के कारण था। देश की सरकार जातिवाद, भाषावाद, क्षेत्रवाद जैसी समस्याओं को सुलझाने में विफल हुई जो बाद में चलकर आर्थिक क्षेत्र में उसका बुरा प्रभाव दिखने लगा। सरकार मज़दूर–किसान–ज़मीनदार व गृह उद्योग के बीच के समभाव को स्थिर नहीं रख पाई। किसान और मज़दूर आर्थिक शोषण के शिकार होते रहे। पंचायतीराज व विकेन्द्रीकरण जैसी व्यवस्था भी इसके कारण प्रभावी नहीं हो पाई। 1947 में भारत जब स्वतंत्र हो रहा था तब वह एक देश नहीं था बल्कि कई प्रांतों का समूह था। इस सच्चाई की पहचान ने उस समय के राष्ट्र निर्माताओं को धर्मनिरपेक्ष संविधान के निर्माण में बाध्य किया था क्योंकि भारत भूमि की प्रकृति स्वतः धर्मनिरपेक्ष का था। परन्तु इस सेक्यूलर प्रकृति की सही पहचान करने में बाद के नेतागण व सरकार विफल हुई। इसका परिणाम अव्यवस्था था। देश का नैतिक स्वरूप बिगड़ गया। भ्रष्ट नेता अपने स्वार्थ लाभ के कारण जनता का शोषण करते रहे। समाज के हर तबके में, प्रशासन व्यवस्था में, सभी जगह भ्रष्टाचार फैल गया। काला धन और भ्रष्टाचार ने देश की आर्थिक व्यवस्था के जड़ों को खा गया। उदारीकरण के इस युग में भारत की विद्यमान भ्रष्ट व्यवस्था के कारण उच्च एवं निम्न वर्ग के बीच की खाई बढ़ती जा रही है। किसानों की गिनती दिन–ब–दिन घटती जा रही है। भारत के स्ववंत्रता प्राप्ति के 69 साल के बाद भी यहॉ का किसान सूदखोरों के फंदे में फॅसा है।

2.3. राजनीतिक परिस्थिति और अस्मिता

भारत की राजनीतिक इतिहास का सबसे भयानक समय 1975 में है जब प्रधानमंत्री श्रीमति इंदिरा गॉधी ने आपातकाल की घोषणा की। इस दौरान बड़े नेतागण जैसे जयप्रकाश नारायण, मोरारजी देसाई, अटल बिहारी वाजपेई, लालकृष्ण आडवानी को कारावास भेजा गया। व्यवस्था के खिलाफ आवाज़ उठाने वालों को रौंदा गया। यह 1977 तक मौजूद था। उसके बाद हुए आम चुनाव में कॉग्रेस की भारी हार हुई और भारत के राजनीतिक इतिहास में पहली बार गैर कॉग्रेस सरकार का गठन मोरारजी देसाई के नेतृत्व में हुआ परन्तु यह सरकार ज़्यादा दिन चली नहीं और चुनाव के पश्चात् 1979 में चरण सिंह भारत के प्रधानमंत्री बने। यह दोनों जनता पार्टी के सदस्य थे। यह सरकार भी ज़्यादा चली नहीं और 1980 के आम चुनाव में बहुमत के साथ फिर से इंदिरा गॉधी प्रधानमंत्री के पद में चुनी गईं। 1980 में पंजाब में खलिस्तान की मॉग उठी। इस विद्रोह को सरकार ने सैनिक बल के सहारे कुचल दिया। इसकी प्रतिक्रिया बहुत भयानक थी। प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गॉधी की हत्या उनके अपने सिक्ख अंगरक्षकों द्वारा की गई। इसके पश्चात् सिक्ख हत्याकाण्ड हुआ। इंदिरा गॉधी की हत्या के प्रतिकार के रूप में दिल्ली में ही हज़ारों सिक्खों की हत्या की गई। पंजाब में सशस्त्र बल विशेष अधिकार अधिनियम तथा आतंकवाद बाधित क्षेत्र के रूप में घोषित किया गया। श्रीमति इंदिरा गांधी की हत्या के बाद उनके बेटे श्री राजीव गॉधी 1984 में प्रधानमंत्री बने।

80 के दशक में भारत सरकार ने विदेशी कंपनियों का मंडी में शेयर का प्रतिशत बढ़ा दिया। भारत में स्थापित होने वाले विदेशी कंपनियों पर सरकार का शेयर कम किया गया। भोपाल गैस दुर्घटना का स्रोत यूनियन कार्बाइड इंडिया लिमिटेड, एक अमेरिकन कंपनी थी। उसमें सरकार का हिस्सा 49.1 प्रतिशत था। सरकार निजी संस्थाओं को अधिक वरीयता दे रही थी। देश के कई हिस्सों में हिन्दू कट्टरवादी दंगे कर रहे थे। यह वही समय था जब विश्व हिन्दू परिषद् और अन्य हिन्दू कट्टरवादी अयोध्या की रामजन्म भूमि का मसला खड़ा किया था। 1977 में प्रधानमंत्री इंदिरा गॉधी ने इन घटनाओं को मद्देनज़र रखते हुए सामान्य जन और मुसलमानों को विश्वास में लेने के लिए संविधान की प्रस्तावना में समाजवाद और धर्मनिरपेक्षता शब्द जोड़ दिया। ''इंदिरा गॉधी के समाजवाद और अल्पमत राजनीति से प्रतिबद्धता 1977 में देखी जा सकती है। जब भारत, एक घोषित प्रभुत्व, लोकतांत्रिक गणतंत्र है, उसके संविधान की प्रस्तावना में 'धर्म निरपेक्ष' और 'समाजवादी' दो शब्द जोड़े गए। इसके अतिरिक्त सरकारी नीतियॉ और उद्यम अधिक से अधिक धर्म और जाति पर आधारित होने लगी और धार्मिक अल्पमतों व सामाजिक तौर पर पिछड़े वर्गों को विशेष सुविधाएँ देनी लगी।''[8]

कॉग्रेस और अन्य राजनीतिक दलों ने वोट बैंक की राजनीति को अपनाया। देश के कई हिस्सों में क्षेत्रवाद, भाषावाद आधारित समस्याएँ उभर रही थीं। इन सभी का प्रभाव 1984 के आम चुनाव में प्रतिफलित हुआ जो आगे चलकर 1991 के आम चुनाव में भारतीय जनता पार्टी को मुख्य विपक्ष पार्टी के रूपमें प्रतिष्ठित किया।

श्रीलंका में वहॉ की सरकार और एलटीटीई के बीच चल रही युद्ध में एलटीटीई के विरुद्ध उठाए गए कदम के प्रतिकार में एलटीटीई ने 1991 में कॉग्रेस पार्टी के प्रचार–प्रसार के लिए तमिलनाडू आए श्री राजीव गॉधी की आत्मघाती बांबिंग द्वारा हत्या की गई। इसके तुरन्त बाद हुई आमचुनाव में कॉग्रेस की बड़ी जीत हुई और प्रधान मंत्री के रूप में पी वी नरसिंहराव हुए। इसी सरकार 1992 में भारतीय अर्थव्यवस्था में उदारीकरण लायी। 1999 के आम चुनाव में श्री ए बी वाजपेई के नुतृत्व में आए एनडीए ने संसद में बहुमत के साथ जीत हासिल की। यह पहली गैर कॉग्रेसी सरकार बनी जिसने अपने पॉच साल के कार्यकाल को पूरा किया। हालॉकि अगले आम चुनाव के बाद डॉ. मनमोहन सिंह के नेतृत्व में कॉग्रेस की सरकार 10 साल तक शासन में रहीपरन्तु भ्रष्टाचार और काले धन के मामलों में फंसी रही। इसके परिणामस्वरूप 2014 के आम चुनाव में श्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में एनडीए की सरकार फिर शासन में आई। ''उसके दूसरे कार्यकाल के दौरान भ्रष्टाचार और काले धन के मामलों ने कांग्रेस की छवि को खराब कर दिया था। उसे नीतिगत पक्षाघात के लिए भी कड़ी आलोचना झेलनी पड़ी जिसने भारत की अर्थ व्यवस्था को पूरे दशक के दौरान मंद कर दिया। दूसरी तरफ मोदी के सबसे बड़े समर्थक भारत के शहरी और मध्यवर्ग है, जो कांग्रेस के घोटालों में डूबे शासन के विकल्प ढूॅढ रहे थे।''[9]

इस तरह देखें तो 1980 के बाद भारत की राजनीतिक परिस्थिति अत्यंत गंभीर स्थिति में चल रही है। इस समय के दौरान ही महत्वपूर्ण राजनीतिक बदलाव हुए। समाजवादी शक्तियों का पतन और कट्टर हिन्दुत्ववाद जैसे सांप्रदायिक शक्तियों का उत्थान हुआ है। जाति

आधारित राजनीति आज सभी जगह व्याप्त है। भारतीय राजनीति में आए बदलाव आज पूरे भारत के सामाजिक व सांस्कृतिक फलक पर गहरा असर छोड़ा है। भारत के आर्थिक विकास पर ज़ोर देने हेतु सरकार ने प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को बढ़ाया है। कहा जाता है कि 'मेक इन इंडिया' पहल से अर्थव्यवस्था के 48 प्रतिशत तक बढ़ा है।

2.4. **सांस्कृतिक परिस्थिति और अस्मिता**

भारत की संस्कृति की पहचान यहॉ के विभिन्न जातियों व धर्मों के सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक भिन्नता और उनके परंपरागत विश्वासों के आधार पर करना चाहिए। इन्हें केवल उच्च, मध्य एवं निम्न वर्गों में विभाजित किए बिना, समाज में उनके स्थान को निर्धारित करना आवश्यक है। भारत की यह जातियॉ समाज के आर्थिक ढांचे के हिस्से भी हैं जिनके बिना समाज की गतिशीलता थम जाएगी। यह जातिगत भिन्नता उनके व्यवसाय पर निर्भर है जो बाद में जाकर प्रत्येक जाति या समूह के लोगों पर रूढ़ हो गई। इसका मतलब यह है कि जाति पहले व्यक्ति के कर्म पर निर्भर था। भारतीय समाज के इन विभिन्न सामूहित विभागों की सही पहचान और उनकी समस्या से रू–ब–रू हुए बिना भारत की सांस्कृतिक उत्थान संभव नहीं है। भारत भूमि की विशेषता यह है कि यह विभाजन केवल हिन्दू धर्म में नहीं बल्कि यहॉ आए इस्लाम, इसाई, पारसी आदि धर्मों में भी पाए जाते हैं। ''सामाजिक और आर्थिक पृष्ठभूमि में, मज़दूरी के सामाजिक विभागों के आधारभूत इकाई के रूप में जाति का समाज में एक ठोस अस्तित्व है। उनके नाम अक्सर व्यावसायिक होते हैं।''[10]

भारत की संस्कृति की पहचान के संदर्भ में धार्मिक अल्पमतों का स्थान भी महत्वपूर्ण है। भारत में हिन्दू धर्म बहुमत का धर्म है और इस्लाम, ईसाई, सिक्ख, बौद्ध, जैन तथा पारसी को महत्वपूर्ण धार्मिक अल्पमत के रूप में घोषित है। भारत में धार्मिक अल्पमत के संदर्भ में यह जान लेना आवश्यक है कि सदियों पहले जो भी धर्म भारत भूमि में आए हैं उनका इतिहास सांस्कृतिक आदान प्रदान का रहा है। आज भारत के सभी धर्म आचार–विचार के संदर्भ में कहीं न कहीं समभाव रखते हैं। यह कई सदियों के आपसी व्यवहार का परिणाम है। कला, साहित्य, संगीत, नृत्य, भाषा आदि जीवन के कई क्षेत्रों में सभी धर्मों का आदान–प्रदान हुआ है। इन सभी में सभी धर्मों के अंश हमें मिल जाएँगे।

स्वतंत्रोत्तर भारत के संदर्भ में धर्म को अपने सही अर्थ के विकृतिकरण का सामना करना पड़ा है। धार्मिक कट्टरपंथियों के अधिकार की प्राप्ति हेतु राजनीति करने की प्रवृत्ति ने भारत में कई दंगे करवाए हैं। इस तरह की कोई भी घटना निदनीय है तथा भारत के सांस्कृतिक अस्मिता को ठेस पहूंचाने वाली है। 1980के दौरान अयोध्या राम जन्म भूमि का मसला विश्व हिन्दू परिषद्, राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ, बजरंग दल आदि के द्वारा खड़ा करना तथा 6 दिसम्बर 1992 में बाबरी मस्जिद का खण्डन स्पष्टतः भारत में धार्मिक ध्रुवीकरण को पैदा करने का था। इसमें यह सफल भी हुए। इस घटना के बाद देश के कई हिस्सों में हिन्दू–मुस्लिम दंगे हुए और इनमें कई हज़ार लोग मारे गए। यह भारत की धर्मनिरपेक्षता की भावना पर सीधा चोट था। इस तरह के धार्मिक व जातिगत मसले बहुत बार उठे हैं। इस संदर्भ में यह देखा जाना चाहिए कि प्रत्येक धर्म के अपने विश्वास, रीति–रिवाज़ तथा व्यक्ति संबंधी

सामाजिक नियम होते हैं। जिसकी पुष्टि संविधान का अधिनियम 25 करता है। इसके साथ संविधान का अधिनियम 44 के तहत् एक यूनिफॉर्म सिविल कोड का प्रस्ताव है, जो एक राष्ट्र के रूप में भारत की धर्म निरपेक्षता की प्रकृति, धार्मिक अल्पमतों के अधिकार और शोषित वर्ग के हित में न्याय सुनिश्चित करने हेतु संविधान को कसौटी के रूप में लेने जैसे विविध आयाम हमारे सामने खुलते हैं।

1980 के बाद भारत में विद्यमान सांप्रदायिक शक्तियों ने जड़ पकड़ ली। इनमें राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ, विश्व हिन्दू परिषद, इंडियन मुजाहिदीन जैसी संस्थाएँ प्रमुख हैं। इन्होंने आम जनता को धर्म के नाम पर भड़काया है। उनमें नफरत पैदा की है। सांप्रदायिकता भारत के धर्मनिरपेक्षता पर बहुत बड़ा प्रश्न चिह्न लगाती है। स्वतंत्र भारत के विकास प्रक्रिया को धर्मनिरपेक्षता से जोड़ने परवर्ग संघर्ष उभरकर आता है जो भारत के भिन्न जाति व धर्म के होते हुए भी उच्च तथा निम्न वर्ग के विभाजन व निम्न वर्ग के शोषण की समस्या को वरीयता देता है। परन्तु स्वार्थी नेता वर्ग व सांप्रदायिक शक्तियॉ इसे अधिकार प्राप्ति (वोट बैंक) एवं शोषण हेतु जाति व भाषा भेद पर किए जाने वाली राजनीति के स्तर से ऊपर उठने नहीं देते हैं। ''अतः भारत में हमेशा दो प्रकार के धर्म निरपेक्षतावादी मौजूद थे : एक वह जिनके लिए धर्मनिरपेक्षता राष्ट्रीय राजनीति में प्रयुक्त होने लायक उपस्कर मात्र था और दूसरे वह जिन्होंने यह सोचा कि धर्म को राजनीति से पृथक कर राष्ट्रीयता और लोकतंत्र को धर्मनिरपेक्षता के आधार पर खड़ा करें। दूसरी परंपरा को राजनीतिक तौर पर हाशिएकृत किया गया जबकि पहली परंपरा जिन्हें भारतीयता के नाम पर हिन्दू राजनीतिक शैली को आत्मसात् करने की क्षमता थी, उन्हें

वरीयता मिली।''[11] इस संदर्भ में भारतीय समाज और राजनीति को धर्मनिरपेक्ष बनाने में आधुनिक आर्थिक विकास भी विफल रहा।

संप्रदायिक राजनीतिज्ञों ने आर्थिक असमानता, असमान विकास और अविकास को समाज में अपनी पैठ जमाने के लिए बखूबी प्रयुक्त किया है। इन्होंने भारतीय सांस्कृतिक परिवेश में आधुनिक विचारधाराओं के प्रभाव को पाश्चात्य अंधानुकरण के तहत नकारात्मक ढंग से प्रयुक्त कर नारी सशक्तीकरण और दलितों की अस्मिता जैसे आन्दोलनों को क्षीण तथा नष्ट करने की कोशिश की है। ''1982 और 1985 के बीच देश के कई हिस्सों में न्याय व्यवस्था को कायम रखने के लिए 353 से अधिक बार सैनिक सहायता लेनी पड़ी है। 1980 और 1989 के बीच भारत करीब 4500 सांप्रदायिक दंगों से मुखातिब हुआ है, जिनमें 7000 के करीब लोग मारे गए थे। सांप्रदायिक दंगों से प्रभावित जिलों की संख्या में 1961 में 61 से 1986–87 में 250 तक वृद्धि हुई है। केवल 1988 में, 611 सांप्रदायिक दंगे हुए, जिनमें 55 प्रतिशत देहाती क्षेत्रों में हुए हैं। देश में बढ़ती इन घटनाओं को सरकारी तंत्र ने सांप्रदायिक अति संवेदनशील' क्षेत्र के रूप में घोषित किया, जो 1971 में 86 से 1988 में 213 तक बढ़ा है। केवल 1988 में, 'अति संवेदनशील' जिलों की संख्या 82 सेबढ़कर 100 हुआ है।''[12]

अक्तूबर 1990 में एल के आडवानी ने अयोध्या राम जन्म भूमि के विषय को जिस प्रकार महत्व देकर आम चुनाव का विषय बनाया, तथा हिन्दू ध्रुवीकरण के तहत बाबरी मस्जिद का खण्डन कर राम भक्ति और हिन्दू एकता का प्रदर्शन करने का आह्वान और मंडल कमीशन रिपोर्ड

द्वारा प्रस्तुत सामाजिक और आर्थिक समस्याओं को नज़रअंदाज करना, इस बात को सुनिश्चित करता है कि सांप्रदायिक शक्तियॉ जाति व धर्म की राजनीति से ऊपर उठना ही नहीं चाहते हैं। 1975 का आपातकाल इन सांप्रदायिक शक्तियों को भारतीय राजनीतिक परिवेश में अपनी पैठ जमाने का अवसर प्रदान किया है। साथ ही भारत के राजनीतिक शक्ति केंद्रों में उच्च वर्ग की पकड़ अधिक है और भारतीय उच्च वर्ग अधिकतर परंपरावादी है जो ब्रिटिश साम्राज्यवाद के सांस्कृतिक आधिपत्य से पभावित है, वह ब्रिटीश साम्राज्यवाद जिसने भारत में मुख्यधारा राष्ट्रीय आन्दोलन को विफल बनाने के लिए यहॉ की धार्मिक और जातिगत रीति–रिवाज़ों को एक नई व ठोस कानूनी दर्जा दिया।

1980 के बाद भारत की समाज और संस्कृति में बहुत सारे बदलाव आए। सांप्रदायिकता व भ्रष्टाचार से ग्रस्त भारतीय समूह और एक महत्वपूर्ण परिवर्तन से गुज़रा जब 90 के दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था ने उदारीकरण को अपनाया।

नब्बे का दशक भूमंडलीकरण का रहा है। इसका प्रभाव भारत की संस्कृति पर कई तरह से हुआ है। परंपरागत विचारधाराऍ क्षीण होने लगीं। मंडी का उदारीकरण होने से कई विदेशी कंपनियॉ व संस्थाएं भारत में आईं। दुनिया में हर क्षण हो रहे वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास से हम रू–ब–रू हो रहे हैं। इसके साथ ही ब्रांड संस्कृति का भी जन्म हुआ। जाति, भाषा, वर्ग, राष्ट्रीयता आदि के सामाजिक संबंध तीव्र होते जा रहे हैं। इसने विकास के आर्थिक ढॉचे का गठन किया है जो बिल्कुल एक आयामी है। हर पहलू आर्थिक दृष्टि से ऑका जा रहा है।

यह विकासित पश्चिमी देशों का पूर्वी विकासशील एवं अविकसित देशों के ऊपर आर्थिक आधिपत्य है जिसका प्रभाव भारतीय समाज और संस्कृति पर पड़ रहा है। ''वास्तव में भूमंडलीय मंच अपने–आपमें एक पश्चिमी मंच है। यह पश्चिमी सत्ता और नियंत्रण का ही व्यक्तिकरण है।''[13] आर्थिक तंगी के कारण जिस उदारवादी अर्थव्यवस्था का आश्रय भारत ने लिया था,उसने भारत के मूल सांस्कृतिक अस्मिता एवं परिवेश में परिवर्तन लाया। सामूहिकता पर वैयक्तिकता हावी होने लगा। समाजवादी व्यवस्था से उपभोगवादी व्यवस्था में परिवर्तित हुआ। भारत की सामूहिक संस्कृति पर यह एक बड़ा प्रहार है। उदारीकरण के फलस्वरूप पी वी नरसिंहराव सरकार ने तथा 2004 में फिर से शासन में आए कॉग्रेस की सरकार ने कई उद्योगों का निजीकरण किया तथा सरकारी व गैरसरकारी उद्योगों में विदेशी निवेश का प्रतिशत बढ़ाया। आयात शुल्क को कम किया गया तथा देश द्वारा दिए जा रहे प्राधिकृत अनुदान (सब्सिडी) में कटौती की गई। इन्होंने देश के विकास को गति देने के लिए विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (एफ डी आई) को भारत की अर्थव्यवस्था में शामिल किया। पहले बीमा सेक्टर में 26 प्रतिशत तक एफ डी आई को लागू किया गया जो 2014 में नरेन्द्र मोदी की सरकार ने उसे 49 प्रतिशत तक किया। इन्होंने सितम्बर 2014 में 'मेक इन इंडिया' उपक्रम के तहत एफ डी आई की नीतियों को और अधिक उदार बनाया। इसे अन्य कई सेक्टरों में भी लागू किया गया, यथा–अवसंरचना (इंफ्रास्ट्रक्चर), ऑटोमोटिव, औषधीय (फॉर्मास्यूटिकल्स), सेवा, रेलवे, रसायनिक, वस्त्र उद्योग, विमान उद्योग। आज भारत दुनिया के सबसे बड़े मंडियों में एक है और यह दुनिया के सबसे बड़े उपभोक्ताओं में एक है।

इस उदारवादी मंडी में इंटरनेट एक ऐसी भूमिका निभा रहा है जिसने इस पूरी व्यवस्था को लचीला बना दिया। ''आधुनिक सूचना तकनीक से प्रभावित राष्ट्रीय सरकरें भूमंडलीय बाज़ार व्यवस्था को अपनाने के लिए इस कारण भी बाध्य हैं कि उत्पादनकर्ता कहीं भी आ जा सकता है। इंटरनेट तो वह एजेंट है जो बाज़ार–आधारित समाज को विकेंद्रित, जनतांत्रिक और पारदर्शी बनाकर ही छोड़ता है।''[14]भूमंडलीकरण के दुष्प्रभाव भी उसके साथ आने लगे हैं। भारत एक विकासशील देश है और वह विकसित देशों की तरह अपने निवासियों की व्यक्तिगत आर्थिक सुरक्षा को सुनिश्चित नहीं कर सकती। इसलिए भारत जैसे देश को विदेशी पूंजी पर अपनी निर्भरता बढ़ाना घातक सिद्ध होगा। भूमंडलीकरण स्थानीय अर्थव्यवस्था को मिटा रही है। इससे गृह उद्योगों पर बुरा असर पड़ रहा है। इसने देहाती अर्थ–व्यवस्था की आत्मनिर्भरता को करीब–करीब मिटा दिया है। इस संदर्भ में भारत की सरकार पर यहॉ की जनता का बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है।

विकासशील देशों की साम्राज्यवादी देशों और उसकी वैश्विक वित्तीय संस्थाओं पर निर्भरता जितनी बढ़ती जा रही है, उसी प्रक्रिया में दुनिया में नवउपनिवेशवाद का खतरा भी बढ़ने लगा है। ''नवउपनिवेशवाद साम्राज्यवादी शोषण के आर्थिक, राजनीतिक, विधिक, वैचारिक, सैनिक इत्यादि संबंधों की वह प्रणाली है, जो विश्व पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में विकासमान देशों की असमानतापूर्ण स्थिति पर आधारित है। नवउपनिवेशवाद का भौतिक आधार अन्तर्राष्ट्रीय पूँजीवादी श्रम विभाजन और विकासमान देशों की साम्राज्यवादी देशों पर आर्थिक निर्भरता है।''[15] विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोश, विश्व व्यापार संगठन,

विश्व वित्तीय संस्थाओं की आर्थिक सहायता के पीछे उनके अपने निबंधन एवं शर्तें होती हैं जिससे वह अपनी नीतियों को विकासशील देशों पर थोपने तथा देश की राजनीति, संस्कृति आदि पर हस्तक्षेप भी करती है। अतः भारत को इस तरह के अदृश्य संकटों से बचना चाहिए। आज देश की आर्थिक, शिक्षा संबंधी नीतियों के लिए इन विश्व वित्तीय निजी संस्थाओं की सहायता ली जाती है। यह प्रवृत्ति अत्यन्त घातक है।

2.5 **निष्कर्ष**

भारत एक सांस्कृतिक बहुलतावादी, प्रजातांत्रिक, धर्मनिरपेक्ष देश है, जिसकी जड़ें उसकी संस्कृति की गहराईयों में बसी हैं। इसकी सही पहचान ही भारत की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक विकास में हमें सहायक सिद्ध होगी। इसके लिए हमें अपने देश के इतिहास व संस्कृति का सूक्ष्म आकलन आवश्यक है ताकि उग्रवादी, आतंकवादी या नवउपनिवेशवादी शक्तियॉ इसे अपनी गिरफ्त में न लें।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. सच्चिदानन्द सिन्हा –संस्कृति और समाजवाद, पृ. सं– 15
2. अरविन्द एन दास–इंडिया इंवेंटड् – ए नेशन इन दी मेकिंग, पृ. सं– 61
3. के एल शर्मा–भारतीय सामाजिक संरचना एवं परिवर्तन, आमुख
4. सैफुद्दीन अहमद –भारत में सामुदायिक दंगों के दौरान मीडिया की भूमिका, वॉल्यूम 37
5. मजीर हुसैन –बाबरी मस्जिद का खण्डन, दी हिन्दू, 6 दिसम्बर 2012
6. अरविन्द एन दास–इंडिया इंवेंटड् – ए नेशन इन दी मेकिंग, पृ. सं– 14
7. बिपन चन्द्र– आज़ादी के बाद का भारत, पृ. सं– 329
8. कथन शुक्ल – भारतीय राजनीति : तत्काल शिथिलता की पहचान, फेयर ऑब्सॉबर, 16 फरवरी 2012
9. भारत – राजनैतिक विकास, www.globalsecurity.org, 21 july 2016
10. अरविन्द एन दास–इंडिया इंवेंटड् – ए नेशन इन दी मेकिंग, पृ. सं– 85
11. प्रकाश चन्द्र उपाध्याय–दी पॉलिटिक्स ऑफ इंडियन सेक्यूलरिज़म, पृ. सं– 6

12. वही, पृ. सं– 7

13. प्रभा खेतान –भूमंडलीकरण : ब्रांड संस्कृति और राष्ट्र, पृ. सं– 11

14. वही, पृ. सं–13

15. राकेश कुमार –उत्तर उपनिवेशवाद : चुनौतियॉ और विकल्प, पृ. सं– 12